नागार्जुन से लगा करके आज तक करोड़ों शिष्यों ने, करोड़ों साधकों ने, करोड़ों योगियों ने, प्रयत्न किया कि पारद के माध्यम से स्वर्ण निर्मित किया जाए। आज के युग में यह एक असम्भव तथा आश्चर्यचकित करने वाला विषय लगता है, मगर क्या हजारों वर्षों का हमारा इतिहास बेकार है, व्यर्थ है? यह आज के युग में भी इतना ही सत्य है आवश्यकता है ऐसे व्यक्तित्व की, आवश्यकता है ऐसे रसायनज्ञ की, जो रसायन को जानता हो, जो पारद का षोडश संस्कार करने की क्षमता रखता हो, और एक-एक संस्कार को पूर्णता के साथ जानता हो . . .

इस पुस्तक के माध्यम से, मैं यह नहीं कहता कि आप पुस्तक पढ़ कर के स्वर्ण बना ही देंगे। मगर यह कहता हूं कि यह 'स्वर्ण सिद्धि' केवल पहला कदम है। हो सकता है कि सौवां कदम हो। पहला कदम भरेंगे तो सौंवा कदम भी भरेंगे, अंतिम कदम भी भरेंगे। पहला कदम भरने के लिए भी यह पुस्तक है और अन्तिम कदम भरने के लिए भी यही पुस्तक है। यह पुस्तक आपके लिए एक पैगाम है।

आइये! थोड़ा सा आगे बढ़ें, एक क़दम बढ़ें, ऐसे गुरु की खोज करें, ऐसे व्यक्तित्व के समीप जाएं और उनसे ऐसी विद्या प्राप्त करें, कि किस प्रकार से पारद स्वर्ण में परिवर्तित हो सकता है।

जो साधक, शिष्य या पाठक इस ज्ञान के प्रचार-प्रसार हेतु वितरित करने के लिए इस ग्रंथ श्रृंखला की सौ प्रतियां खरीदना चाहें, उन्हें मूल्य में विशेष रियायत दी जायेगी।

— प्रकाशक
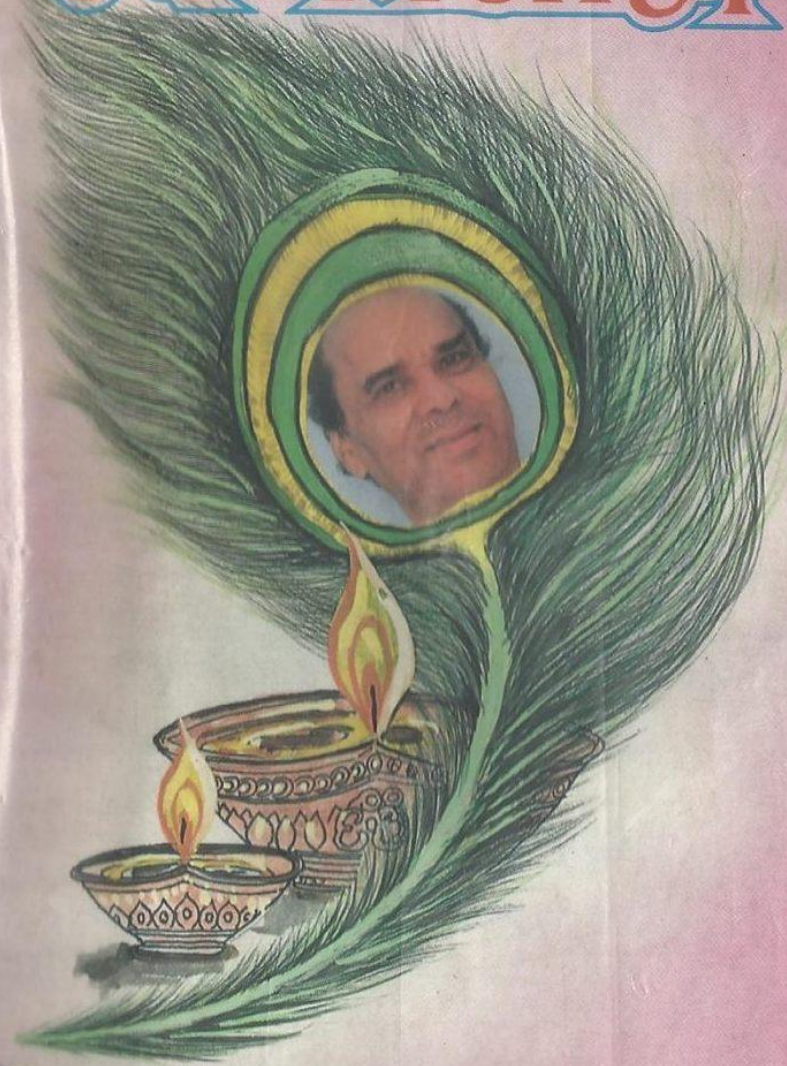
आशीर्वाद

डॉ. नारायण दत्त श्रीमाली

एस-सीरिज

होटेलालगुप्ता

© मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान

संकलन - सम्पादन
श्री अरविन्द श्रीमाली
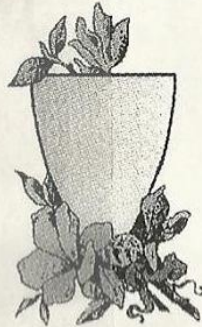
प्रकाशक
मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान
डॉ० श्रीमाली मार्ग, हाई कोर्ट कॉलोनी
जोधपुर - 342001 (राजस्थान)
फोन : 0291-32209, फेक्स : 0291-32010

नवीन संस्करण	:	नवरात्रि, 1997
प्रति	:	1100
मूल्य	:	15/-
कम्प्यूटर वर्क	:	श्रीमती कनक पाण्डेय एवं सूरज डंगोल
संयोजन	:	डॉ० एस० के० बनर्जी
मुद्रक	:	सहारा इण्डिया मॉस कम्यूनिकेशन्स् नोएडा

हां! हम सोना बना सकते हैं

पूरा संसार सोने के पीछे पागल है और सभी भौतिक इच्छाओं को पालने वालों का एक ही लक्ष्य है कि किसी प्रकार से उन्हें सोना प्राप्त हो जाए। इसके लिए वे जंगल-जंगल छानते हैं, परिश्रम करते हैं, परंतु उसके बाद भी वे संतुष्ट नहीं हो पाते।

वैद्यों, हकीमों और कीमियागर भी ताम्बे या पारे से सोना बनाने के लिए बराबर प्रयत्नशील रहे हैं परंतु जहां तक मेरी जानकारी है, बहुत ही कम या यों कहा जाए कि नहीं के बराबर लोगों को इस कार्य में सफलता मिली है।

परंतु दूसरी तरफ यह भी देखने को मिलता है कि कई लोगों ने इस क्षेत्र में सफलता प्राप्त की है। उन्होंने पारे से या तांबे से सोना बनाया है और मैंने अपनी आंखों से उन्हें सोना बनाते हुए देखा है।

भारत के प्राचीन ग्रंथों में बताया गया है कि श्रीसूक्त लक्ष्मी का प्रिय सूक्त है और जो इस सूक्त को अपनाता है, वह जीवन में लखपति-करोड़पति हो जाता है तथा लक्ष्मी उस पर प्रसन्न हो जाती है। नागार्जुन की टीका के अनुसार श्रीसूक्त में सोना बनाने की विधियां हैं। इसके पाठ द्वारा लक्ष्मी का प्रसन्न होना तो प्रतीकात्मकता है, क्योंकि जब इस श्रीसूक्त को समझ कर साधक सोना बना लेगा तो निश्चय ही जीवन में लखपति-करोड़पति हो जाएगा और लक्ष्मी उस पर प्रसन्न हो ही जाएगी।

पिछले दिनों ही मुझे हैदराबाद जाने का अवसर मिला, वहां हनुमान मंदिर के एक वृद्ध पुजारी से भेंट हुई, मैंने यह सुना था कि वे स्वर्ण बनाने में सिद्ध हस्त हैं। उन्होंने मेरा नाम सुन रखा था और जब मैंने उनसे पूछा कि क्या आप पारे या ताम्बे

से सोना बना सकते हैं तो उन्होंने '**हां**' भरी और दूसरे दिन आने के लिए कहा। जब मैं दूसरे दिन उनके यहां पहुंचा तो उन्होंने अत्यन्त सरल भाव से मेरे सामने सोना बनाकर दिखा दिया और वह सारी प्रक्रिया मेरे सामने सम्पन्न की।

उसे बाजार ले जाकर दिखाया तो वह सौ टंच असली और खरा सोना था, उसके बाद उनके सामने ही उसी क्रिया से मैंने सोना बनाकर दिखाया।

कुछ समय पहले मुरादाबाद में एक सज्जन ने बताया कि उनके पास किसी साधु की दी हुई डायरी है, जिसमें हस्तलिखित नुस्खे हैं। उसमें एक नुस्खा सोना बनाने का भी था। मैंने उसको अलग कागज पर नोट कर लिया था और घर आकर उस विधि से सोना बनाया तो बन गया, यह सोना भी सौ टंच खरा था।

मुरादाबाद के ही एक अन्य धार्मिक, श्रेष्ठ साहू परिवार के सदस्य से मिलने का अवसर मिला, उन्होंने भी सूचना दी थी कि वे सोना बनाने में सफल हो गए हैं। समय के अभाव के कारण क्रियात्मक रूप में नहीं दिखा सके थे, परंतु फिर भी विश्वास है कि उन्होंने सफलता पा ली होगी, पर इसके बारे में प्रामाणिक रूप से मैं कुछ नहीं कह सकता।

कुल मिलाकर मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि सोना बनाना असम्भव कार्य नहीं रहा है। पारे से या ताम्बे से रसायन क्रिया द्वारा सोना बनाना सम्भव हो सका है। यद्यपि प्राचीन ग्रंथों में जो नुस्खे हैं उन्हें हम समझ नहीं पाए हैं, इसीलिए यह विद्या गोपनीय रह गई थी, पर अब यह गोपनीय नहीं रही। यह सोना पूरी तरह से प्रामाणिक शुद्ध और असली होता है तथा इस पर व्यय बहुत ही कम आता है।

एक बात मैंने और अनुभव की, कि चाहे हैदराबाद के गौड़ जी महाराज हों या कोई अन्य साधु-संन्यासी, या रसायन शास्त्री, सभी ने कृपा कर मुझे सोना बनाने की विधि अवश्य बताई परंतु बनाने के बाद कहा कि किसी और को आप मत बताना, पता नहीं इसके पीछे उनका क्या हेतु रहा, शायद परम्परागत कारण रहे होंगे कि इस प्रकार से यह श्रेष्ठ विद्या गलत लोगों के हाथों में न चली जाए।

जन साधारण में सोना बनाने के बारे में कई उक्तियां या दोहे अथवा पद प्रचलित हैं। यद्यपि ये सारे पद मेरी डायरी में नोट हैं परंतु इन विधियों का परीक्षण नहीं किया है। कुछ पद उदाहरण के रूप में प्रस्तुत हैं।

वीरज रस में खरल करै तद गोली बन जाए।
बेर झाड़ के पत्र में गोली को रख आय।।
धीरे-धीरे आंच दे, सोरे का जल द्याय।
नींबू रस मार्जन करे, स्यार सिंग होई जाय।।

अर्थ — वीरज अर्थात् पारा लेकर, रस अर्थात् शहद (पुरानी शहद) में घोटना चाहिए। काफी समय तक घोटने से पारा टूटने लग जाता है और उसकी गोली बन जाएगी। ऐसा होने पर पानी से धो लें, जिससे शहद हट जाएगा और पारे की गोली रह जाएगी। फिर बेर के पत्तों को पीस कर उसकी लुगदी में इस गोली को रखकर मिंगनी की आंच में गर्म करना चाहिए। यह आंच धीरे-धीरे देनी चाहिए और उस पर धीरे-धीरे कलमी सोरे का पानी छिड़कते रहना चाहिए। जब वह गोली पूरी तरह से पक जाए तो वह पारा सोने में परिवर्तित हो जाता है, दूसरे शब्दों में सियार, शेर बन जाता है।

इसी प्रकार पश्चिमी राजस्थान में एक पद मुझे एक ग्रामीण से प्राप्त हुआ था जो इस प्रकार है —

पारे को ले दीव में ग्वार पाठ रस धाल।
खरल करे घोटे पछे धीमी आंचस चाल।।
जद गाढो होई जाय तद गजपुट सूंदे डाल।
पछि नींबू रस में पके तो वीर्य स्वर्ण हो माल।।

अर्थ — शुद्ध पारे को खरल में लेकर उसमें ग्वारपाठे का रस मिलाकर घोटना चाहिए। जब दोनों परस्पर अच्छी तरह से मिल जाएं तो उसे मिट्टी के किसी बर्तन या दिये में रखकर धीमी आंच से पकाना चाहिए। ऐसा होने पर वह गाढ़ा हो जाएगा तब उसे गजपुट में रखकर पकाना चाहिए और फिर (पकने पर) उसे नींबू रस की भावना दें तो पारा सोने में परिवर्तित हो जाता है। इसी प्रकार नैनीताल के आगे घोड़ाखाल एक स्थान है जहां पर मेरी एक सन्यासी से भेंट हुई थी। वास्तव में ही वह रसायन सिद्ध था, उनकी मेहरबानी से ही मैं संसार में दुर्लभ पौधा तेलियाकंद देख सका था। यह दुर्लभ पौधा नैनीताल के जंगलों में है और केवल एक ही पौधा है। अस्तु।।

उसने मुझे पारे से सोना बनाने के बारे में एक पद लिखाया था वह पद इस प्रकार है -

नकछिकनी के रस में पारो, डाल के खरल करो
भांग बिजोरा लेय बराबर, उसमें उही भरो,
फिर दे आंच पकावे पारो, ताही खरल करो,
बीही के रस में सानो, तो सोनो बनत खरो।।

अर्थ — उत्तर प्रदेश में तालाब के किनारे नकछिकनी देखने को मिल जाती है। यह

छोटा सा पौधा होता है और काफी जगह में फैल जाता है। इसे घोटकर, इसका रस निकालकर, उसमें पारा डालकर खरल करना चाहिए और जब पारा उसमें भली प्रकार से मिल जाए तो उसके बराबर भांग और बिजोरा लेकर, उसकी लुगदी बनाकर उसमें पारा रख देना चाहिए और इसे आंच में पकाना चाहिए।

जब वह भली प्रकार से पक जाए तो उसे बाहर निकाल कर उस पर बीही का रस डाला जाए तो वह पारा तुरंत सोने में परिवर्तित हो जाता है।

जैसा कि ऊपर बता चुका हूं कि ये पद मुझे अलग-अलग व्यक्तियों से मिले हैं और व्यस्तता के कारण इनको परख नहीं सका हूं, फिर भी मैं समझता हूं कि ये पद सही होंगे।

अलवर के एक वैद्य ने तो मुझसे यह पद प्राप्त कर सोना बनाने में सफलता प्राप्त की थी, ऐसा उसने मुझे सूचित किया था। कुल मिलाकर मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि यदि व्यक्ति चाहे तो इस क्षेत्र में भी सफलता प्राप्त कर सकता है।

जैसा कि मैं ऊपर बता चुका हूं कि श्री सूक्त लक्ष्मी का प्रिय सूक्त है और उसके प्रथम ढाई पदों में सोना बनाने की विधि छिपी हुई है।

मैं काफी समय से इन सूक्तों का वैद्यक भावार्थ स्पष्ट करने के लिए प्रयत्नशील था और पिछले वर्ष ही इसका वैद्यक भावार्थ स्पष्ट हो सका है।

ये सूक्त प्रामाणिक हैं और वास्तव में ही इन सूक्तों में अर्थात् **श्रीसूक्त** के सोलह पदों में सोना बनाने की चार विधियां छिपी हैं।

नागार्जुन के अनुसार सारी विधियां प्रामाणिक तथा सही हैं।

श्री सूक्त

1. श्री सूक्त का प्रथम पद –

हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्ण रजतस्रजाम्।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह।।

शब्दार्थ – हिरण्यवर्ण-कुटज। हिरणी-मजीठ। स्रजाम-सत्यानाशी के बीज। चंद्रा-नीला थोथा। हिरण्यमयी-गंधक। जातवेदो-पारा। आवह-ताम्र.पात्र।

भावार्थ – सर्वप्रथम ताम्बे का बड़ा पात्र लेना चाहिए जिसमें कम से कम

बीस से तीस किलो पानी आ सके। उसमें सबसे नीचे पारे को रख देना चाहिए इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यह पारा शुद्ध हो। (आजकल नकली पारा या लोह मिश्रित पारा बाजार में बहुत प्राप्त होता है।)

इसके ऊपर गंधक को पीसकर उसका बुरादा डाल देना चाहिए। उसके ऊपर नीला थोथा पीसकर (जिसमें कण न रहे) उसके ऊपर छिड़क देना चाहिए।

इसके ऊपर कुटज और मजीठ को बराबर मिलाकर रखना चाहिए तथा सबसे ऊपर सत्यानाशी के बीज की ढेरी बना देनी चाहिए।

2. श्री सूक्त का द्वितीय पद

ताम आवह जातवेदो लक्ष्मी मन पगामिनीम्।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम्।।

शब्दार्थ – ताम-उसमें। जातवेदो-पारा। पगामिनीम्-अग्नि। हिरण्यं-कुटज। गामश्वं-जल। पुरुषानहम्-बीस।

भावार्थ – जब ताम्बे के बर्तन में इस प्रकार की ढेरी बन जाए तो उसमें धीरे-धीरे पानी डाल देना चाहिए पर इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह ढेरी बिखर न जाए और जिस प्रकार से क्रम है उसमें अंतर न आ जाए। इसके बाद नीचे अग्नि जलानी चाहिए और प्रत्येक घंटे के बाद उसमें थोड़ा-थोड़ा कुटज डाल देना चाहिए। एक प्रकार से वह पानी कुटज के पाउडर से ही पकना चाहिए। इस प्रकार लगभग आठ घंटा अर्थात् बीस घटी पकना चाहिए।

3. श्री सूक्त का तृतीय पद

अश्वपूर्वां रथमध्या हस्तिनाद प्रबोधिनीम्।
श्रियं देवी मुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम्।।

शब्दार्थ – अश्वपूर्वा-सुनहरी परत। रथमध्यां-पानी के ऊपर। हस्तिनाद-हाथी की गर्दन से निकलने वाली गंध व मस्त हाथी की गुंजार। प्रबोधिनीम्-नींबू का रस। श्रियं-सोना। देवी-लक्ष्मी। मुपह्वये-समृद्धि। जुषताम्-प्रसन्नता।

भावार्थ – जब आठ घंटे तक वह सब कुछ पकेगा तब उस पर अर्थात् पानी के ऊपर सुनहरी परत सी छा जाएगी और आंच देने पर उस पकते हुए

पानी की आवाज मस्त हाथी की गुंजार के समान होगी और पानी की सुगंध हाथी की गर्दन से निकलने वाले मधु के समान होगी। ऐसा होने पर समझ लेना चाहिए कि तलहटी में रखा हुआ पारा पक गया है। फिर उस पानी को ठण्डा कर नीचे से वह पारा निकाल लेना चाहिए और उसे नींबू के रस में घोटने से वह पारा सोना बन जाता है।

ऐसा होने पर लक्ष्मी प्रसन्न होती है, उसके घर में समृद्धि आ जाती है और चारों तरफ प्रसन्नता का वातावरण बना रहता है।

श्री सूक्त के पदों में प्रयुक्त शब्दों का जो अर्थ मैंने दिया है वह हिन्दी शब्दकोश से मेल नहीं खाता, पर नागार्जुन के ग्रंथ के शब्दों के अर्थ इसी प्रकार से हैं और इस प्रकार से क्रिया करने पर सौ टंच प्रामाणिक सोना बन जाता है।

इस प्रकार का सोना प्रामाणिक वैद्य के निर्देशन में ही बनाना चाहिए क्योंकि दो पदार्थ मिलने पर या उनके गर्म होने से गंध निकलती है, वह स्वास्थ्य के लिए नुकसानदायक भी सकती है। कई बार ऐसी गंध से सिर के सारे बाल उड़ जाते हैं और आंखों में वह गंध लगने पर अंधा होने का भय रहता है।

वास्तव में ही हमारे ग्रंथों में अपूर्व और आश्चर्यजनक विधियां लिखी हुई हैं परंतु ये विधियां संकेत और कूट भाषा में हैं। आवश्यकता इस बात की है कि इन्हें भली प्रकार से समझा जाए और इसके बाद इसका लाभ समाज को दिया जाए।

मैं इस लेख और पुस्तिका के माध्यम से पाठकों का आह्वान करता हूं कि उनके पास यदि पूर्वजों द्वारा लिखी हुई किसी प्रकार की कोई विधि हो या प्राचीन ग्रंथ हो तो वह भेजें या उन्हें किसी प्रकार की कोई विधि या जड़ी-बूटी अथवा कोई नुस्खा ज्ञात हो तो वह हमें लिख भेजें, जिससे कि उसके द्वारा समाज का और देश का हित हो सके। इससे हमारी प्राचीन धरोहर सुरक्षित, स्थायी और मृत्युंजयी बन सकेगी।

किसने कहा....?
तुम सोना नहीं बना सकते!

मेरा प्रारम्भिक जीवन एक संन्यस्त जीवन रहा है। संन्यास क्यों लिया, कब लिया, कैसे लिया वह तो एक अलग ही गाथा है किंतु संन्यस्त जीवन में रहने पर मुझे पग-पग पर जो अनुभव मिले, वे उन सिद्धियों से भी अधिक महत्वपूर्ण हैं, जिन सिद्धियों को प्राप्त करने के लिए मुझे भारत के एक छोर से दूसरे छोर तक की खाक छाननी पड़ी। पता नहीं कितने साधु-संन्यासियों के दरवाजे पर माथा रगड़ना पड़ा कि वे मुझे कोई विद्या सिखा दें। मुझे उन दिनों एक ही धुन, एक ही लगन थी कि जहाँ से हो, कुछ न कुछ ऐसा प्राप्त कर लेना है जो अपने आप में अद्वितीय हो। ऐसा हो कि उससे मुझे स्वयं गर्व हो सके। मुझे जहाँ से जो सूत्र मिलता, जहाँ पर कुछ प्राप्ति की आशा होती, मैं वहीं चल पड़ता था। लेकिन आज खेद के साथ कहना पड़ता है कि मैने इस प्रकार से भटकने में तथाकथित साधुओं, मठाधीशों और संन्यासियों के भी जो चेहरे देखे उससे मन में विक्षोभ भर उठा था। अधिकांश स्थानों पर तो केवल प्रचार मात्र था। एक प्रकार का आडम्बर रचा हुआ था कि अमुक संन्यासी के पास अमुक सिद्धि है जबकि उसके पास वैसा कुछ होता ही नहीं था, लेकिन जैसी कि मैंने संन्यासियों के मध्य ही एक कहावत सुनी कि 'नकटों के बीच में कौन नकटा' या जिसे उर्दू के मुहावरे में 'इस हमाम में सभी नंगे हैं' कहते हैं, वही बात थी। सब एक दूसरे के ढोंग को बढ़ावा देकर अपनी उदर तुष्टि की क्रियाओं में और उदर तुष्टि हो जाने के बाद जीवन के भोग-विलास के प्रबन्धों में लीन दिखाई पड़ते थे। मुझे यह देख-देखकर वितृष्णा होती जा रही थी कि ऊपर से तो ये सभी कामिनी-कंचन के त्याग की बातें करते हैं, सामान्य जनता को इसका उपदेश देते हैं, किंतु स्वयं क्या कर रहे हैं? कभी-कभी तो मुझे लगने लगता कि गृहस्थ जीवन ही श्रेष्ठ है। उसमें भले ही व्यक्ति किसी अन्य का हित न कर पा रहा हो किंतु अपनी जगह अपने ढंग से ईमानदार तो है।

यह सत्य है कि गृहस्थ अपने स्थान पर ईमानदार होता भी है। उसकी अपनी ही समस्याएं होती हैं किंतु फिर भी वह इन सभी के मध्य उलझता-सुलझता हुआ भी, अपने पथ पर, आध्यात्मिकता की ओर, अपने ढंग से गतिशील बना रहने का प्रयास करता रहता है। उसकी इन्हीं समस्याओं में सर्वाधिक प्रमुख समस्या धन की होती है। वह चाहे व्यापार करता हो अथवा नौकरी, उसकी निश्चित आय में उसका पोषण तो हो जाता है, किंतु जीवन की अनेक कामनाएं अतृप्त ही रह जाती हैं . . . और कामनाएं रखना जीवन में कोई पाप नहीं है। यद्यपि उपदेश इसी बात के सभी धर्म शास्त्र, सभी धर्मशास्त्री देते रहते हैं किंतु मैं तो इन तथाकथित धर्मशास्त्रियों को भी समीप से देख था अत: जीवन की व्यवहारिकता से परिचित हो गया था। इस तथ्य से परिचित हो गया था कि चाहे गृहस्थ जीवन हो चाहे संन्यस्त जीवन, धन के बिना कहीं पर भी निर्वाह होना संभव ही नहीं है। धन भी केवल बंधा बंधाया नहीं वरन ऐसा जो हमारी इच्छानुसार हमें प्राप्त हो सके, हमारी आवश्यकता के समय हमारे पास उपलब्ध रहे।

संन्यस्त जीवन के क्रम में मैंने आबू पर्वत पर साधना करते समय कुछ संन्यासियों के मध्य स्वर्ण निर्माण की बात सुनी थी। उन्हीं से पता चला था कि प्राचीन काल में रसायन विज्ञान के माध्यम से अनेक मठों में ताँबे अथवा पारद को स्वर्ण में परिवर्तित कर मठ का खर्च चलाया जाता था। उससे ही अनेक अनेक साधु-संन्यासियों के भरण पोषण के साथ-साथ मंदिर निर्माण आदि सत्कार्यों में धन व्यय किया जाता था। ऐसा तर्क संगत भी प्रतीत होता है क्योंकि मठों की कोई निश्चित आय व्यवस्था तो होती नहीं, दान पुण्य से भी इतना अधिक धन नहीं आ सकता, फिर क्या उपाय थे कि प्राचीनकाल में भगवतपाद आद्य शंकराचार्य एवं गुरु गोरखनाथ जैसे अद्भुत व्यक्तित्वों ने इतने विशाल संगठनों की नींव डाली। संन्यासियों-साधुओं की एक सेना ही खड़ी कर दी। आज भी वे मठ कितने अधिक सम्पन्न हैं इसे बताने की आवश्यकता नहीं। निश्चय ही ऐसा कोई न कोई उपाय रहा अवश्य होगा, निश्चय ही कोई ऐसा रसायन विज्ञान रहा होगा जिससे ऐसा संभव हो पाता था। भारत की कीमियागीरी का इतिहास ऐसा ही कुछ कहता है। नागार्जुन सदृश्य व्यक्तित्वों का नाम आज भी किसी स्वर्णध्वज की भाँति भारत के इतिहास के उस विशाल फलक पर पूर्ण आभा से फहरा रहा है।

बाद में तो मैंने गृहस्थ जीवन में प्रवेश किया, किंतु गृहस्थ जीवन में प्रवेश करने के उपरांत भी मन में जो एक ललक समा गई थी, कि क्यों न मैं भी इस ज्ञान की सत्यता को परख कर देखूं, वह ललक क्षीण नहीं हुई अपितु गृहस्थ जीवन में नित नई बाधा आने से और भी अधिक प्रबल ही होती गई। यदि गंभीरता से देखें तो गृहस्थ

जीवन में (या यूं कहे कि सम्पूर्ण जीवन में ही) 75 प्रतिशत बाधाओं का कारण या उस कारण का निदान धन पर ही आधारित होता है। मेरे घर वाले इसे मेरी सनक कहते थे, किंतु मेरे मन में सोना बनाने की जो धुन सवार हो गई थी वह मुझे निरंतर भटकाती ही रहती थी। केवल एक-दो अथवा पाँच-दस वर्ष ही नहीं, संन्यस्त जीवन से लेकर मैंने अब तक अपने जीवन के तीस वर्ष व्यतीत किए हैं इसी उधेड़बुन में।

यूं तो सोना बनाने के पीछे मैंने अपने जीवन के लगभग तीस वर्ष व्यतीत कर दिए हैं और इन तीस वर्षों में मैंने लगभग सभी प्राचीन ग्रंथ टटोल लिए, कई साधु-संतों के संपर्क में रहा, कई व्यक्तियों से मिला लेकिन हर बार मेरे प्रयत्न करने में कोई न कोई कसर रह ही जाती। इन विधियों में पारे को बांध कर सोना बनाने, स्वर्ण सूत पाउडर बनाकर सोने में परिवर्तित करने और तांबे को गंधक का पुट देकर सोना बनाने के बारे में बहुत अधिक प्रयत्न किए थे और पारे के द्वारा मैंने सन् 72 में ही सोना बना लिया था, पर वह सोना कच्चा था और उससे मैं संतुष्ट नहीं था।

ऐसे में 'मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान' पत्रिका का जनवरी विशेषांक 1982 हाथ लगा और उसमें सोना बनाने से संबंधित कुछ विधियां दी गई थीं, मैंने इनमें से एक विधि को अपनाया और पहली ही बार में मुझे सफलता हाथ लग गई।

इस लेख में स्वर्ण से संबंधित एक कूट पद प्रकाशित हुआ था, जो कि इस प्रकार था –

अहिफण पारद शशि टणकारा।
गंधरफ अगन मजन सिणगारा।।
कपट कंटी तूता कंचा।
तब बन जाए स्वर्ण सौ टंचा।।

मैंने सबसे पहले एक मरे हुए सांप को प्राप्त किया। सौभाग्य से मैं इन्दौर के होलकर मार्ग से गुजर रहा था कि मुझे किनारे पर काला सांप मरा हुआ मिल गया, मैं उसे उठाकर घर ले आया और उसके मुंह में पारा भरकर मुंह बांध दिया, साथ ही मुल्तानी मिट्टी को भिगोकर उसका लेप सांप के मुंह पर लगा दिया जिससे कि अन्य कोई तत्व अंदर न जाए। उसके बाद कण्डों की आग में मृत सर्प को रखकर जला दिया। संस्कृत में टणकारा का अर्थ जलाना होता है, शशि-वायु अवरोधक को कहते हैं, ऐसा मुझे एक संस्कृत पण्डित ने कहा था।

मैंने कण्डों की आग देकर उस सर्प को जलाया तो लगभग छ: घण्टे सर्प को जलने में लगे। उसके बाद ऊपर के कण्डे हटाकर जहां सर्प का मुंह था वहां

पर गंधक का पानी छिड़क कर उसे ठण्डा किया, गंधरफ अगन का अर्थ उस अग्नि पर गंधक का पानी डालना होता है। ऐसा करने पर कई बार नीली चिनगारियां सी निकलीं (यह आंखों के लिए नुकसानदायक होती हैं अत: चश्मा पहनकर ही इस प्रकार का कार्य करना चाहिए।)

मैंने लगभग आधा किलो गंधक का पानी बनाया था और धीरे-धीरे सर्प के फन पर डालता रहा, इस प्रकार लगभग एक घण्टे के बाद वह आंच समाप्त हुई और उस फन को ठण्डा होने में लगभग तीन घण्टे लग गए।

इसके बाद मैंने उसके मुंह से उस पारद को निकाल दिया। वह पारा अत्यन्त चमकीला, सफेद, मक्खन की तरह मुलायम और सुंदर बन गया था, एक प्रकार से पारे का मर्दन होकर उसका बद्धीकरण हो गया था।

फिर मैंने नीला थोथा व पानी मिलाया, तो पानी एक रस हो गया। इसमें मैंने सफेद कपड़ा भिगोया और फिर एक मिट्टी का कुल्हड़ लेकर उसमें तांबे का मोटा पैसा तथा वह पारा मिलाकर रख दिया और उस कुल्हड़ पर ढक्कन देकर नीले थोथे में भिगोया हुआ कपड़ा लपेट दिया। इस प्रकार उस कुल्हड़ पर कपड़े के तीन या चार फेरे आ जाने चाहिए, करपट का अर्थ नीले थोथे में भिगोया कपड़ा और कण्टी का अर्थ लपेटना होता है।

इसके बाद मैंने एक हाथ लम्बा-चौड़ा तथा एक हाथ गहरा गड्ढा खोदकर उसमें कण्डे भर दिए और बीच में वह कुल्हड़ रखकर अग्नि लगा दी।

यह अग्नि लगभग छ: घण्टे तक जलती रही, और इतना ही समय वापस उस अग्नि को ठण्डी होने में लगा। मैं बराबर उसका ध्यान रख रहा था, जब अग्नि बिल्कुल ठण्डी हो गई तो उस कुल्हड़ को मैंने बाहर निकाल दिया और जब उसका ढक्कन हटाकर खोला तो वह तांबे का मोटा पैसा उस पारे के संपर्क में आकर शुद्ध सोने में परिवर्तित हो गया था।

मैंने उस पैसे को बाजार में ले जाकर दिखाया तो वह सौ टंच शुद्ध स्वर्ण था और उसमें किसी भी प्रकार की न्यूनता नहीं थी।

यह मेरा व्यवसाय नहीं है, मेरे तो जीवन की एक आकांक्षा थी कि हमारे प्राचीन ग्रंथों में जिस प्रकार से एक धातु को दूसरी धातु में बदलने की विधियां दी हुई हैं, वे कहां तक सही हैं और इस घटना के बाद मैं यह बात दावे के साथ कह सकता हूं कि वे सभी विधियां सही और प्रामाणिक हैं, आवश्यकता उनको भली प्रकार से समझने की है।

मुझसे आकर स्वर्ण बनाने की प्रक्रिया सीख लें

योगी हरिहर स्वामी घुमक्कड़ और मस्तमौला योगी रहे हैं, उन्हें धातु परिवर्तन प्रक्रिया का विषद ज्ञान है और इस क्षेत्र के वे सिद्ध हस्त कीमियागर हैं, उन्होंने अपना प्रदर्शन कई सन्यासियों और व्यक्तियों के सामने स्पष्ट किया है तथा प्रामाणिकता के साथ उन्होंने बताया है कि धातु परिवर्तन कोई कठिन प्रक्रिया नहीं है। उन्होंने जो प्रचलित लोकोक्तियों के अर्थ बताए हैं वे इस पुस्तिका में ज्यों के त्यों दिये जा रहे हैं, इस क्षेत्र में हमारा दखल नहीं है।

पदार्थ विज्ञान भारतवर्ष की प्राचीन एवं मौलिक पद्धति रही है, यह अलग बात है, कि कालान्तर में यह पद्धति धूमिल होती गई और कुछ इने-गिने व्यक्तियों को ही इसकी जानकारी रही, उन्होंने भी इसको सर्वथा गोपनीय रखा और अपने निकटस्थ प्रिय शिष्यों को ही इसका क्रियात्मक ज्ञान दिया।

धनवन्तरी और आगे चलकर नागार्जुन ने तो इस क्षेत्र में सिद्धहस्तता प्राप्त कर ली थी। पारे से सोना बनाने का जो ज्ञान और विवेचन उस युग में हुआ वह अपने-आप में आश्चर्यजनक है, सही अर्थों में पारा या तांबा स्वर्ण के अधिक निकट है और थोड़ा सा प्रयत्न किया जाए तो व्यक्ति इसमें सफलता पा सकता है।

मेरा कोई घर नहीं है, कोई अता-पता नहीं है, मस्त जीवन है और पूरे हिमालय को ही अपना घर बना रखा है। पिछले 20 वर्षों में मुझे कई उच्चकोटि के योगियों और कीमियागरों से मिलने का अवसर मिला और उन्होंने मुझे इस विद्या की जानकारी दी। आज मैं दम ठोक कर कह सकता हूं, कि गारंटी के साथ तांबे या पारे से सोना बनाया जा सकता है, रही बात पाठकों की मुझसे मिलने की तो यदि संयोग होगा और ईश्वर

ने चाहा तो कभी न कभी, कहीं न कहीं भेंट हो ही जाएगी।

यह सारी पद्धति क्रियात्मक है, केवल पढ़कर समझना और कर देना जरा कठिन कार्य है। ज्यादा अच्छा यह होगा कि इस प्रकार के कार्य को किसी योगी के चरणों में बैठ कर उनकी सेवा करें और अपने हाथों से यह प्रक्रिया सम्पन्न करके सीखें और समझें, यों मेरा अनुभव यह भी रहा है कि मैंने किसी एक पहाड़ी गांव में इस प्रकार की लोकोक्तियां बातचीत के प्रसंग में बोली थीं और सुनकर के ही कुछ युवकों ने स्वर्ण बना लिया था। अगली बार फिर जब उस गांव में जाने का अवसर मिला तो उन्होंने इससे संबंधित क्रिया संपन्न करके दिखा दी और सौ टंच खरा सोना बनाकर बता दिया कि यदि जीवट और लगन हो तो जीवन में क्या कुछ नहीं हो सकता।

इन लोकोक्तियों के अर्थ गूढ़ हैं और उसके अंदर ही छिपे हुए हैं, आवश्यकता है उस कुण्डली को खोलने की और उसके अर्थ को समझने की। मैं कुछ लोकोक्तियां और उसके अर्थ नीचे दे रहा हूं, जिज्ञासु साधक इस संबंध में प्रयत्न कर भाग्य आजमा सकते हैं, यों मैं अधिकतर गौमुख और उसके आगे काकभुसुण्डी क्षेत्र में ही रहता हूं, आप जब भी चाहें आकर मिल सकते हैं।

तोरण गंधक मोरसपारा, इन्हें मिलाय
आगरस डारा नाग मार नागिन को देय,
सोने सै खप्पर भरि लेय।।

अर्थ — नीला थोथा, शुद्ध गंधक और कटकटैया - तीनों को बराबर मात्रा में अर्थात् प्रत्येक को पाव-पाव भर ले लें और कूट कर बारीक पाउडर बनाकर अलग रख लें, फिर एक बड़ी कड़ाही में सबसे नीचे कटकटैया का पाउडर उसके ऊपर पांच तोला पारा उसके ऊपर गंधक और उसके ऊपर नीला थोथा बिछा दें, तथा उस पर तांबे की कटोरी रख दें और कढ़ाही में सोलह किलो पानी डाल दें। नीचे कण्डों की आग देने से जब पानी के ऊपर सुनहरी परत आ जाए तो धीरे-धीरे पानी को किसी बर्तन से अलग ले लें और कटोरी हटाकर पाउडर को बिखेर कर देखें तो वह पारा सोने में परिवर्तित हुआ दिखाई देगा।

इसमें ध्यान रखने की बात यह है कि आंच न तो बहुत तेज होनी चाहिए और न धीमी, मध्यम आंच से आठ या दस घण्टे तक यह क्रिया सम्पन्न करनी चाहिए।

अदरक दरज शिव गिरिजा आए,
सुवा तार गले लिपटाये।

देय आप मुनि आशिष देहे,
चंद्र सूर्य इक ठाम करैहे।।

एक पाव भर आक का दूध, पाव भर अदरक का रस, पाव भर बिल्वपत्र का रस लेकर अलग रख दें और फिर पांच तोले पारे को सबसे पहले शुद्ध शहद में छः घण्टे घोटें, जब वह गोली सा बन जाए तब उसे अदरक के रस में घोटें, यह भी लगभग आठ घण्टे तक घोटना चाहिए। इसके बाद इसको आक के दूध में बराबर तब तक घोटते रहना चाहिए, जब तक पारे का रंग पीला न हो जाए, अंत में लगभग आठ या दस घण्टे तक उस पीले पड़े हुए पारे को बिल्वपत्र के रस में घोटना चाहिए, ऐसा होने पर लगभग पीले रंग की एक ठोस गोली सी हो जाती है, इसके बाद ताम्बे को पिघला कर उसे पानी के समान बनाकर इस गोली पर डालें तो यह गोली स्वर्ण में परिवर्तित हो जाती है, यह क्रिया बिना आग के ही संपन्न होती है और प्रामाणिक है।

नाग भुवंग समंकर सूता,
घी ग्वार दे भरदे कूता।
मर्दत मर्दत करदे क्षार,
कंचन बनत न लागे बार।।

पांच तोला शुद्ध पारे को (ऐसा पारा जिसमें लौह तत्व बिल्कुल न हो) एक पाव ग्वारपाठे के रस में घोटना चाहिए। लगभग आठ घण्टे घोटने के बाद इस पारे को अमरकंद या कंदलता की पत्तियों की लुगदी के साथ घोटना चाहिए। अंत में इसी पारे को गंधक और सालपर्णी के साथ आठ घण्टा घोटने से वह पारा निश्चित रूप से शुद्ध स्वर्ण बन जाता है। इसे कई बार परीक्षित किया है।

अगरु गंधक पारा बोला,
नागन को भुंई में जा खीला।
अगन लगाय उठायै झारी,
सुवरण होय मछींदर तारी।।

किसी साफ मिट्टी की हण्डी में पाव भर विल्व पत्र का रस, अगर का चूर्ण और गंधक को मिलाकर उसके बीच में पांच तोला पारा रख देना चाहिए और इसके ऊपर ढक्कन देकर गेहूं के आटे से मुंह को भली प्रकार से बंद कर देना चाहिए, फिर लगभग दस किलो मिंगनी के ढेर के बीच में हण्डिया रखकर मिंगनी की आंच देनी चाहिए। जब मिंगनी जल जाए तो हंडिया ठण्डी होने पर दूसरी दस किलो मिंगनी की आंच देनी चाहिए, इस प्रकार चार बार करना चाहिए। ऐसा होने पर अंत में वह पारा अंदर ही अंदर स्वर्ण बन जाता है।

गंगा गंधक गफण वाचा,
सभी मिलाय धूनी दे साचा।
तांबे को जो करदे पानी,
मिलत स्वर्ण बनि कहे ज्ञानी।

यह पद्धति भी सौ टंच प्रामाणिक है और मैंने इसको कई बार आजमाया है।

शुद्ध गंधक एक किलो, अमर बेल के पत्ते एक किलो, अरलू की जड़ एक किलो, इन तीनों को कूट पीस कर पाउडर सा बनाकर आठ किलो पानी में मिला दें और आग पर चढ़ा दें, लगभग तीन घण्टे तक पानी पकावें और दौला यंत्र में तांबे को पिघला कर भर दें। दौला यंत्र को ज्यों का त्यों उस पानी में रखकर, आगे पर आठ घण्टे तक उबालें तो दौला यंत्र में रखा हुआ पारा शुद्ध स्वर्ण बन जाता है।

अगरस मगरस गंधक पारा,
धुनी देकर गोखर झारा।
गोरखनाथ कहे सुन चेला,
कंचन करणे का यह खेला।।

एक किलो गोखरू, एक किलो झारपर्णी, आधा किलो मगरस तथा आधा किलो अरलू का चूर्ण परस्पर मिला कर इसके बीच में पांच तोला पारा रख दें और यदि दस से बारह घण्टे इसको मिंगनी की आंच दें तो निश्चय ही यह पारा शुद्ध स्वर्ण में परिवर्तित हो जाता है।

नाग नागनी लिपटत अंगा,
जहर मोगरा गंधक संगा।
छाती पर चढ़ देवे आगी,
सोनो पहिन रात भर जागी।।

कुचला जिसको काजरा भी कहते हैं, एक किलो ले लें। इसमें पाव भर कायफल, पाव भर कांतलोह, तथा सौ ग्राम गाफस मिला लें और सबको कूट पीस कर एक कर दें, फिर उस पाउडर को कढ़ाई में बिछाकर उसके ऊपर पांच तोला पारा रख कर, उस पर काले सांप का जहर एक तोला छिड़क कर, आधा पाउडर उसके ऊपर डाल कर रख दें, फिर इसे कढ़ाई में सोलह किलो पानी में डालकर उबालें, जब पानी दसवां हिस्सा रह जाए तो कढ़ाई को नीचे उतार दें और धीरे-धीरे बचे हुए पानी को बाहर फेंक दें, पाउडर को हटाने पर रखा हुआ पारा निश्चित रूप से सोने की डली बन जाएगा।

वस्तुत: और भी सैकड़ों लोकोक्तियां नाथ सम्प्रदाय के योगियों और

कीमियागरों में प्रचलित हैं। ये सभी लोकोक्तियां प्रामाणिक और अनुभवगम्य हैं। धातु परिवर्तन श्रेष्ठ विद्या रही है, यदि जीवट शक्ति वाला व्यक्तित्व निरंतर प्रयत्न करे तो अवश्य ही वह अपने जीवन में सफलता पा सकता है।

संभव है स्वर्ण निर्माण यंत्रों से भी

मैं नहीं जानता कि आप मेरी बात पर कितना विश्वास करेंगे और कितना नहीं, लेकिन जो मैंने जाना है और जैसा मैंने अपनी आँखों से होते हुए देखा है, उसके बाद दावे से कह सकता हूँ कि सोना बनाना जहाँ रसायन विज्ञान के द्वारा संभव है, मंत्रों के द्वारा संभव है, तंत्र के द्वारा संभव है, तो वहीं यंत्र के द्वारा भी संभव है। आज भी ऐसे कई घुमक्कड़ साधु-संन्यासी हैं जो फक्कड़ बने अपनी मस्ती में घूमते रहते हैं, जिनका घर बार तो होता ही नहीं, स्वयं के शरीर की भी जिन्हें परवाह नहीं होती है। खाने बैठे तो खाते ही चले गए और नहीं खाया तो दो-दो दिन तक कोई सुध नहीं ली — मैंने ऐसे लोग भी देखे हैं, और देखी है उनकी अद्‌भुत मस्ती। मानो सारी दुनिया को अपनी ठोकरों पर रखने के लिए तैयार हैं। दुनिया को ठोकर पर रखा, तो खैर उनकी अपनी मन: स्थिति होगी लेकिन संन्यासी को भी भरण पोषण के लिए निर्भर तो दुनिया पर रहना पड़ता है, लेकिन ऐसे ही संन्यासियों में से संन्यासियों के एक वर्ग को मैंने अनुभव किया कि वे अपने भरण पोषण के लिए समाज पर निर्भर नहीं रहते उल्टे मस्ती में आने पर अपने ही पास आने वालों को कुछ लुटा देने को तत्पर रहते हैं, ठीक उन्हीं औघड़दानी भगवान शिव की ही भांति।

मैंने संन्यासियों के उस वर्ग के साथ भी एक लम्बा समय व्यतीत किया है और समीप रहने पर देखा है कि वे किस उपाय से ऐसा संभव कर पाते हैं। ऐसा ज्ञात करने में मुझे जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है उनका भुक्त भोगी तो मैं ही रहा हूं। वह तो घटनाओं का एक लम्बा क्रम है। फिर भी जो कुछ मैं समझ सका, उसे बताना अपना धर्म समझता हूं।

मैने उन्हीं संन्यासियों के पास देखा कि वे अपने थैले में एक पोटली को बहुत ही संभाल कर रखते हैं और जिसे वे '**गुडम**' कहते हैं और किसी भी अमावस्या की रात्रि में बेपरवाह जिधर मन चाहता है उधर निकल जाते हैं। बस आवश्यकता होती है उन्हें तो एकांत की और एकांत मिलने पर वे कभी पत्थर पर हल्दी से, तो कभी कुंकुंम से, तो कभी कभी भूमि पर ही किसी तिनके की सहायता से एक आकृति बना कर उस पर वे अपने सभी गुडम रख देते हैं। बाद में मुझे पता चला कि वे ऐसे कुल पैंसठ '**गुडम**' उस आकृति या जिसे यंत्र कहना उचित होगा, उस पर रख देते हैं और अपनी जप माला से एक विशेष मंत्र का जप करते हैं।

मैं यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक समझता हूं कि संन्यासियों का ऐसा वर्ग मुझे अमरावती के समीप मिला था और यहाँ मेरा समूह से तात्पर्य पच्चीस-तीस संन्यासियों से नहीं बल्कि पांच छह संन्यासियों से है। उनका पंथ, उनकी पद्धति मुझे आज तक समझ में न आ सकी है। ऐसा लगता है कि मूल रूप से वे किसी प्रमुख पंथ के थे लेकिन अपनी ही शैली विकसित कर अलग थलग पड़ गए थे। यूं भी अमरावती एक ऐसा स्थान है जहाँ साधना की अनेक धाराएं आकर मिली हैं, यह स्थान यदि जैन धर्म का एक प्रमुख केन्द्र रहा है, तो वहीं गुरु गोरखनाथ द्वारा प्रणीत गोरख पंथ का भी प्रमुख केन्द्र रहा है। साथ ही अनेक स्थानीय लोकाचार, बौद्ध पद्धतियाँ आई हैं। एक प्रकार से कहा जा सकता है कि वहाँ वर्ण संकर साधना पद्धतियों का भी विकास संभव हुआ है, और यह तो सुस्थापित तथ्य है कि कोई भी वर्ण संकर प्रजाति अपने आप में अत्यधिक तीव्र एवं प्रखर होती ही है। यह एक जैविकीय तथ्य है। साधना भी एक जैविकीय तथ्य ही होती है क्योंकि साधना किसी मृत वस्तु का नाम नहीं होता (जो कुछ जीवन से जुड़ रहा है वह जब तक स्वयं जीवित न होगा तब तक जीवन से जुड़ ही कैसे सकेगा?)

आगे मैं उस आकृति (अथवा यंत्र) आदि प्रक्रिया का संक्षिप्त विवरण दे रहा हूं जिसके माध्यम से मैने स्वयं अपनी आँखों से केवल यंत्र के माध्यम से स्वर्ण निर्माण होते देखा है और देखा है उन संन्यासियों की बेफिक्री का रहस्य। यह बात और है कि वे इसका प्रयोग लोभवश न कर केवल अपनी आवश्यकता के अनुरूप ही करते हैं। वे अमावस्या की रात्रि में जिस प्रकार का यंत्र निर्मित करते हैं उसको मैं नीचे दे रहा हूं।
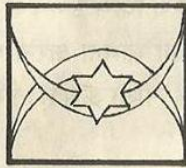
वे इसी यंत्र पर अपने सभी (पैंसठ) **गुडम** रख कर अनुमान से आधे घंटे तक '**ॐ निन् निन्नादिनी ग्रं योगीई फट्**' मंत्र का जप कर उन सभी गुडमो को तांबे अथवा पारद पर डाल देते हैं तो मुश्किल से 30 सेकेंड बीतते न बीतते वह स्वर्ण में परिवर्तित हो जाता है। एक दम खरा सोना! सौ टंच सोना! मैंने खुद उसे कसौटी पर कस कर, उसका परीक्षण कर खरा पाया!

स्वर्ण प्रक्रिया का दुर्लभ ज्ञान
सिद्ध-सूत

जब किसी पदार्थ की बात आती है तो स्वत: ही रसायन विज्ञान अथवा केमेस्ट्री की बात भी आ ही जाती है। एक प्रकार से कहें तो पदार्थ का रसायन विज्ञान से घनिष्ठ सम्बन्ध माना जाता है किंतु रसायन विज्ञान अथवा केमेस्ट्री अपने आप में सम्पूर्ण विज्ञान नहीं है कि उसे ही ज्ञान की एक मात्र कसौटी मान कर चला जाए। यदि वह सम्पूर्ण होता तो क्यों नये-नये तत्वों की खोज का क्रम रुक न गया होता? वस्तुत: रसायन विज्ञान अथवा केमेस्ट्री केवल एक श्रृंखलाबद्ध विज्ञान की ही दूसरी संज्ञा है, अध्ययन का एक सुव्यवस्थित क्रम भर ही है और उसकी भी अपनी सीमाएं हैं। यह केवल तत्वों का वर्णन, उनकी विवेचना कर सकती है, नवीन पदार्थ का सृजन नहीं। इसके विपरीत भारत की रसायन विद्या अधिक समृद्ध रही है, क्योंकि जिस बात को रसायनविज्ञान अब कुछ कुछ (और वह भी विवशतापूर्वक) स्वीकार करने पर बाध्य हो रहा है, उसे हजारों वर्षों पूर्व भारत में धातु परिवर्तन के रूप में स्वीकार किया जा चुका था। धातु परिवर्तन अर्थात एक धातु को दूसरी धातु में परिवर्तित कर देने की क्रिया। एक धातु से ही दूसरी नई धातु की रचना कर देना। इसके पीछे जो चिंतन था वह पूर्णतया आध्यात्मिक था। भारतीय चिंतन में यह मान्य रहा कि प्रत्येक वस्तु में वही एक '**तत्व**' विद्यमान है जिसे कहीं ब्रह्म तो कहीं पिण्ड कहा गया है। जब सब एक ही है तो उनमें अन्त: सम्बंध भी होगा ही, यही चिंतन धातु परिवर्तन का मूल आधार बना।

धातु परिवर्तन के प्रयोग पिछले कई हजार वर्षों से भारतवर्ष में हो रहे

हैं, इन पर उच्चकोटि के वैज्ञानिक, रसायनज्ञ प्रयोग-परीक्षण कर रहे हैं, वैज्ञानिकों ने भी इस बात को स्वीकार किया है कि प्रत्येक धातु का निर्माण निश्चित संख्या में विशेष प्रोटानों के संयोजन से निर्मित होताहै। यदि पदार्थ में से कुछ प्रोटान को निकाल दिया जाए या उसमें कुछ प्रोटान मिला दिया जाए तो पदार्थ या धातु में परिवर्तन सम्भव है।

आज से हजारों वर्ष पूर्व नागार्जुन ने इस प्रयोग को सिद्ध कर दिखाया था, उन्होंने पारे से सोना बनाकर विश्व के सामने यह सिद्ध कर दिया था कि एक पदार्थ को दूसरे पदार्थ में रूपान्तरित किया जा सकता है।

पर नागार्जुन के बाद यह ज्ञान लुप्त हो गया, उन्होंने जीवन के अंतिम काल में 'सिद्ध-सूत तरंगिणी' नामक ग्रंथ की रचना की थी, पर वह ग्रंथ अप्राप्य था, पिछले ही दिनों इस प्रामाणिक ग्रंथ का पता चला है और आश्चर्य की बात यहहै कि उसमें पारे के कई-कई संस्कार बताए हैं, तथा स्वर्ण बनाने की सर्वाधिक सुगम विधि पाठकों के लिए रखी है।

स्वामी अलकानंद जी इस क्षेत्र के महारथी हैं, उन्होंने कृपा कर यह महत्वपूर्ण लेख पाठकों के लिए भिजवाया है, जो उनके ही शब्दों में प्रस्तुत है।

नागार्जुन हमारे देश के श्रेष्ठतम रसाचार्य थे, उन्होंने अपने जीवन में प्रयत्न कर एक महत्वपूर्ण विधि खोज निकाली जो धातु परिवर्तन क्रिया थी, उन्होंने बहुत वर्ष पहले यह स्पष्ट कर दिया था, कि प्रत्येक पदार्थ कुछ विशेष अणुओं से निर्मित है, यदि उस पदार्थ से अणु का निकालना या जोड़ना सम्भव हो सके तो निश्चय ही पदार्थ में परिवर्तन हो सकता है, आज भी वैज्ञानिक इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि अणुओं के परिवर्तन से पदार्थ में परिवर्तन हो सकता है, उदाहरणार्थ — पारद में 200 प्रोटान होते हैं और सोने में 197 प्रोटान्स होते हैं। यदि किसी विधि द्वारा पारे में से 3 प्रोटान निकाल दिए जाएं तो पारा स्वर्ण में परिवर्तित हो जाएगा, क्योंकि विज्ञान की परिभाषानुसार जिसमें 197 प्रोटान है वह सोना है। यह क्रिया किस प्रकार सम्पादित होगी, इसी खोज में महान वैज्ञानिक आइन्स्टीन ने अपना सम्पूर्ण जीवन लगा दिया। जीवन के उत्तरार्द्ध में यह स्वीकार किया था, कि भारतीय रसाचार्य इस क्षेत्र में हमसे कहीं बढ़-चढ़ कर हैं, नागार्जुन ने सफलतापूर्वक अणुओं के इस परिवर्तन की क्रिया का पता लगा लिया था और पारे को शुद्ध स्वर्ण में परिवर्तित कर दिया था।

उन्होंने अपने अनुभव और जीवन का निचोड़ अपने ग्रंथ '**सिद्ध-सूत तरंगिणी**' में लिखा था, परंतु दुर्भाग्य से इस ग्रंथ को ढूंढने के सफल-असफल

हजारों प्रयत्न किए गए, परंतु इस ग्रंथ का कोई पता नहीं चल सका। इस बीच इस नाम से कुछ ग्रंथ भी हाथ लगे परंतु परीक्षण करने पर वे ग्रंथ नकली सिद्ध हुए, इस ग्रंथ का पता दो-तीन वर्षों पूर्व ही लगा। जो कि नागार्जुन के हाथ से ताड़ पत्रों पर लिखित यह महत्वपूर्ण ग्रंथ है, इसमें उन्होंने सिद्धसूत बनाने की प्रक्रिया का प्रामाणिक विवरण दिया है।

सिद्धसूत

पारे के कुछ ऐसे संस्कार किए जाते हैं, कि वह अंत में सफेद भस्म के रूप में परिवर्तित हो जाता है, यदि सही रूप में कहा जाए तो अभी तक पारे के संस्कारों के नामकरण का ही ज्ञान लोगों को नहीं है, पारे के कुल अठारह संस्कार होते हैं, जिनमें

1. स्वदेन, 2. मर्दन, 3. मूर्च्छन,
4. उत्थापन, 5. त्रिविध, पातन, 6. रोधन,
7. नियामन, 8. संदीपन, 9. गगनभक्षाण,
10. संचारण, 11. गर्भद्रुति, 12. बाह्यद्रुति,
13. जारण, 14. ग्रास 15. सारण कर्म,
16. संक्रामण, 17. वेधन, 18. शरीर योग।

इन अठारह संस्कारों को संपन्न करने पर वह पारा स्वयं सफेद पाउडर के रूप में बन जाता है, जो कि संसार का सर्वाधिक महंगा, बहुमूल्य पाउडर है।

इसकी यह विशेषता है, कि इसके संयोग से कोई भी धातु दूसरी धातु में रूपान्तरित हो जाती है, उदाहरण के लिए सौ ग्राम तांबे को पिघला कर उसमें एक तिनके पर आने लायक सिद्ध सूत को मिला दिया जाए तो वह तांबा सोने में परिवर्तित हो जाता है। इसी प्रकार यदि पारद को द्रव्य रूप में परिवर्तित कर उसमें सिद्ध सूत मिला दिया जाए तो वह निश्चय ही सौ टंच खरा और शुद्ध स्वर्ण बन जाता है।

पर पारे के ये संस्कार ही सर्वाधिक कठिन और गोपनीय हैं। अभी तक पारे के सोलह संस्कारों के नामकरण भी सही रूप से स्पष्ट नहीं हो पाए हैं, इन सोलह संस्कारों के लोग अलग-अलग नाम बताते हैं, फिर सोलह संस्कार करना तो बहुत दूर की बात है। मेरा पूरा जीवन रसायन की खोज में ही व्यतीत हुआ है और मेरे जीवन का उद्देश्य पारे को भली प्रकार से शोधन करना, उसके अठारह संस्कार करना और पारे को स्वर्ण में परिवर्तित करना ही रहा है, मुझे अब जीवन के उत्तरार्द्ध में अत्यधिक प्रसन्नता है कि मैंने अपने उद्देश्य में सफलता पा ली है और मैं चैलेन्ज के साथ लाखों लोगों की भीड़ के सामने पारे को स्वर्ण में परिवर्तित करके दिखा सकता हूं।

मेरा दूसरा संकल्प नागार्जुन द्वारा लिखित '**सिद्ध सूत तरंगिणी**' ग्रंथ का पता लगाना था, पिछले वर्ष ही मुझे इसकी प्रामाणिक प्रति नागार्जुन के वंशज से ही प्राप्त हुई, जिनके घर में कई सौ वर्षों से इस ग्रंथ की मात्र पूजा होती थी, उस ग्रंथ में बताए गए तरीके से सिद्ध सूत बनाना अत्यधिक सरल हो गया है और इसके माध्यम से मनों तांबे को या पारे को सोने में बदला जा सकता है।

इसलिए मैं सिद्धसूत बनाने की प्रक्रिया का पहली बार प्रामाणिक ज्ञान प्रस्तुत कर रहा हूं।

मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान पत्रिका ने भारत की लुप्त विद्याओं मंत्र-तंत्र, योग, अध्यात्म आदि को उजागर करने का जो संकल्प हाथ में लिया है, वह सराहनीय है। भारत में यह एकमात्र ऐसी पत्रिका है, जो इस प्रकार की प्रामाणिक जानकारी देने में समर्थ है, इसके पीछे उच्चकोटि के योगी और अध्येता का वरद हस्त है।

ऊपर मैंने अठारह संस्कार बताए हैं और अंतिम संस्कार '**सिद्धसूत**' है, परंतु नागार्जुन ने एक विशेष तरीके से सिद्धसूत बनाने की प्रक्रिया का वर्णन किया है, जो आसानी से संपन्न हो जाती है। मैंने उस प्रयोग को भी आजमाया है और मुझे आश्चर्य है, कि नागार्जुन की पद्धति अत्यधिक सरल, सुगम और प्रामाणिक हैं। मैंने इस पद्धति के द्वारा '**सिद्धसूत**' बनाया है, जो उच्चकोटि का बना, जिसके द्वारा तुरंत ही कोई भी धातु स्वर्ण में परिवर्तित हो जाती है।

सिद्धसूत प्रक्रिया

यह प्रक्रिया पारे से ही संभव है, पारे को अलग-अलग ग्रंथों में रस, रसेन्द्र, सूत, रसेश्वर, चपल, रसराज और पारद आदि शब्दों से सम्बोधित किया है, सामान्य रूप से पारा कई दोषों से युक्त होता है, जिसमें आठ दोष प्रमुख हैं —

1. नाग, 2. वंग, 3. वह्नि, 4. मल,
5. चापल्य, 6. विष, 7. गिरि और 8. असह्याग्नि।

इन दोषों से रहित पारे को ही प्रयोग में लाना चाहिए। बाजार में जो पारा मिलता है, वह मल युक्त अथवा दोषयुक्त होता है इसलिए शुद्ध पारे का प्रयोग ही अनुकूल माना गया है। रसाचार्यों के अनुसार जो पारा तीन सौ सत्तावन डिग्री के तापक्रम को सहन कर सके, वही पारा शुद्ध पारा है।

पारे को शुंद्ध करने के लिए दस तोला पारा लेना चाहिए और इसे हल्दी के पाउडर से धो लेना चाहिए, इसके बाद इस पारे को अंकोला के रस में मर्दन करने से

वह ज्यादा शुभ्र व स्वच्छ बन जाता है, फिर इस प्रकार के पारे को काले धतूरे के बीजों के साथ मर्दन करने से उसका विष दोष नष्ट हो जाता है। तत्पश्चात् बराबर मात्रा में सोंठ, काली मिर्च और पीपर के चूर्ण के साथ मर्दन करने से पारा सभी प्रकार से शुद्ध हो जाता है, तब इसे घी-क्वार या ग्वारपाठे के रस में घोटने से वह पारा सिद्धसूत प्रक्रिया में उपयोग करने योग्य हो जाता है। नागार्जुन के अनुसार इस प्रकार से शुद्ध पारे का सप्त संस्कार करना चाहिए, उनके अनुसार सप्त संस्कार इस प्रकार है —

प्रथम संस्कार

अदरक, जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, तथा नागरबेल के एवं पान के रस को बराबर मात्रा में लेकर उसमें शुद्ध पारे का मर्दन करना चाहिए, इससे पारा शुद्ध मोती के समान चमकीला और उपयोगी बन जाता है।

दूसरा संस्कार

प्रथम संस्कार के बाद पारे को सिंगरफ नींबू के रस तथा चित्रक, अदरक और कांजी का बराबर भाग लेकर उसमें मर्दन करें, तब तक मर्दन करते रहें जब तक वह एकरस न हो जाए, फिर शुद्ध पानी से सौ बार धो कर पारे को निकाल दें, इस प्रकार पारे का दूसरा संस्कार सम्पन्न होता है।

तीसरा संस्कार

दूसरे संस्कार के बाद सुहागा, लवण, और मधु में पारद को अच्छी तरह मर्दन कर उसका गोला सा बना लें और फिर मलमल से किसी स्वच्छ वस्त्र में पोटली सी बांधकर दौला यंत्र में क्षार द्रव्य भर कर उसका स्वेदन करें। इस प्रकार स्वेदन करने से पारद चैतन्य और संस्कारित हो जाता है और इस प्रकार का पारद उच्च स्थिति क्रिया में आ जाता है।

चतुर्थ संस्कार

तृतीय संस्कार सम्पन्न होने के बाद पारद को काली मिर्च का चूर्ण, फिटकरी, सहजन, कांजी, सुहागा, पांचों नमक, चित्रक और राई इन सबको बराबर मात्रा में मिलाकर, बीच में उस पारद को रख कर दौला यंत्र में रख दें और दो दिन तक मंद मंद अग्नि से स्वेदन करने से पारा स्वर्णभक्षी हो जाता है। अब यदि इस पारे पर स्वर्ण रखा जाए तो यह पारा उस स्वर्ण को अपने आप में पचा लेता है।

पंचम संस्कार

चतुर्थ संस्कार के बाद सेंधा नमक, कशीश, रस कपूर, गुंजा और सज्जीखार को बराबर मात्रा में लेकर मर्दन करें और फिर उसे जल से धोकर लाल चंदन में घोटें। ऐसा करने पर पारा सुगंध युक्त बन जाता है और उसमें से एक विशेष प्रकार की सुगंध आने लगती है।

छठा संस्कार

पंचम संस्कार सम्पन्न करने के बाद पारे में मद्यसार, रस कपूर, फिरंग, गंधक, हिंगुल तथा बराबर मात्रा में वन-तुलसी का रस मिलाकर मर्दन किया जाए, तो ऐसा करने पर पारा पूर्ण संस्कार युक्त हो जाता है और वह '**सिद्धसूत**' प्रक्रिया के अंतर्गत आ जाता है।

सातवां संस्कार

जब छठा संस्कार संपन्न हो जाए तब ऐसे पारद को सहदेवी, सोंठ, ब्रह्मदण्डी, हंसपादी, धतूरा, भांगरा, इमली, वच और बराबर मात्रा में वन तुलसी का रस मिलाकर मर्दन करने से अन्य द्रव्य स्वत: उड़ जाते हैं और पीछे श्वेत भस्म बच जाती है, जिसे '**सिद्धसूत**' कहते हैं। इस पाउडर को या '**सिद्धसूत**' को स्वच्छ शीशी में भरकर रख देना चाहिए, एक तोला '**सिद्धसूत**' पाउडर पचास मन तांबे को सोना बना सकता है।

इस प्रकार का '**सिद्धसूत प्राप्त**' हो जाए, तब जिस धातु को स्वर्ण में परिवर्तित करना हो उसको पहले स्वच्छ कर अग्नि में तपायें और फिर उच्च तापमान पर उसे पिघला दें। जब वह धातु पिघल जाए तब मात्र तिनके भर '**सिद्धसूत**' को उसमें डाल दें और फिर ठण्डा कर दें, ऐसा करते ही वह धातु शुद्ध ठोस स्वर्ण बन जाएगी। मेरी राय में लोहा, तांबा या पारे को पिघला कर उसमें '**सिद्धसूत**' मिलाया जाए तो ज्यादा उत्तम रहता है।

मैंने इस प्रक्रिया द्वारा सैकड़ों बार शुद्ध स्वर्ण बनाने में सफलता प्राप्त की है। मैं **पूज्य गुरुदेव स्वामी निखिलेश्वरानंद जी** का आभारी हूं, कि उन्होंने मुझ पर गुरुवत् भाव बनाए रखा और इस दिशा में मुझे निरंतर प्रोत्साहित करते रहे, आज मैं जो कुछ प्राप्त कर सका हूं, वह केवल मात्र उन्हीं की कृपा का परिणाम है।

वस्तुत: '**सिद्धसूत**' अद्वितीय कल्पवृक्ष के समान है, जिसमें प्रयत्न और परिश्रम तो करना पड़ता है, परंतु परिश्रम के बाद वह दरिद्रता को करोड़ों मील पीछे हटाने में समर्थ हो पाता है और व्यक्ति कुबेरवत वैभवशाली जीवन व्यतीत कर सकता है।

कोई भी कार्य असम्भव नहीं होता, यदि लगन से और परिश्रम से उस कार्य पर लग जाएं तो वह कार्य सफल हो कर ही रहता है, पर हमारे लिए गलतियां निकालना और आलोचना करना अत्यधिक आसान और सरल कार्य है पर इससे आदमी महान नहीं बनता। देश में और विश्व में ऐसे व्यक्ति के नाम की गणना भी नहीं होती, अच्छा तो यह है कि आप आलोचनात्मक आदत को छोड़कर रचनात्मक रुख अपनायें, एक क्षण के लिए रुक कर सोचें कि शायद ऐसा भी हो सकता है और आप उस पर पूरा प्रयत्न करें, उससे संबंधित जितना भी साहित्य है, ढूढ़-ढांढ कर पढ़ लें, उससे संबंधित यदि कोई विशेषज्ञ है, तो उनके संपर्क में जाएं, उनके प्रिय बनें और उनसे वह विद्या प्राप्त करें, दुनिया में कोई भी काम असम्भव नहीं है।

कुछ वर्षों पहले हिमालय की सर्वोच्च चोटी एवरेस्ट पर चढ़ना असम्भव माना जाता था, पर तेनसिंह ने इसे अपनी हिम्मत के बल पर सम्भव कर दिखाया, उत्तरी ध्रुव के अंतिम छोर पर जाने की तो कल्पना ही नहीं की जा सकती थी, पर एक दो नहीं दस-दस लोग वहां तक जा आए हैं, इंग्लिश चैनल को पार करना कठिनतम माना जाता था, पर जो धुन के पक्के हैं, उन्होंने इंगलिश चैनल को तो तैर कर पार किया ही, दोनों तरफ से भी उसे तैर कर पार कर अपनी अजेयता सिद्ध कर दी। एक या दो नहीं ऐसे सैकड़ों उदाहरण हैं, जब सामान्य से लगने वाले आदमियों ने असम्भव कार्य संभव कर दिखाए हैं।

इन लोगों ने आलोचनाओं में अपना समय बरबाद नहीं किया, **इन लोगों**

ने ऐसे किसी भी कार्य को असंभव नहीं माना। ऐसे लोगों ने इस बात की भी चिंता नहीं की कि समाज क्या कहेगा, इन लोगों के मन में तो संसार में अपने नाम का डंका बजाना था और ऐसा उन्होंने कर दिखाया। स्वर्ण बनाना भी ऐसा ही कठिन और असम्भव कार्य लगता है, परंतु जो दृढ़ निश्चयी हैं, जो हिम्मतवान हैं, जो कुछ कर गुजरने की क्षमता रखते हैं, उनके लिए यह असम्भव नहीं, उन्होंने इस क्षेत्र में भी पूर्ण सफलता प्राप्त की है और भौतिक दृष्टि से सभी समस्याओं से मुक्ति पाई है।

जो रसायन शास्त्र के बारे में थोड़ी बहुत भी जानकारी रखते हैं, वे इस बात को अच्छी तरह से जानते हैं, कि धातु परिवर्तन कोई असम्भव क्रिया नहीं, आवश्यकता इस बात की है कि सही तरीके से कार्य संपन्न हो और सही मार्गदर्शक मिल जाए।

विदेशों में कार्य

कीमियागिरी या धातु परिवर्तन के बारे में प्रयत्न, भारत में ही नहीं विदेशों में भी हो रहे हैं और उन्होंने इनमें सफलता पाई है। अभी-अभी अमेरिका के मिस्टर ब्रूच ने एक किताब प्रकाशित की है, जिसका नाम है 'चेन्ज टू गोल्ड' इसमें लेखक ने भारतीय योगियों के साथ अपने बिताए हुए तीस वर्षों का पूरा-पूरा प्रामाणिक विवरण दिया है और बताया है कि स्वर्ण बनाने की खोज में वह कहां-कहां नहीं भटका और आखिर में उसे यह विद्या प्राप्त हो ही गई।

इसके बाद ब्रूच लगभग छः वर्षों तक उन योगियों से सीखी हुई क्रियाओं पर प्रयत्न करता रहा, कई बार उसे असफलता मिली, कई बार वह एक धातु को सोने जैसे रंग में परिवर्तित तो कर देता था, पर खरा सोना नहीं बना पाता था, परंतु उसने हिम्मत नहीं हारी, पुस्तक में उसकी एक पंक्ति बहुत अच्छी है, **'यदि मैं असफल हो गया तो केवल मैं ही असफल होता पर यदि मैं सफल हो गया तो पूरे संसार में मेरा ही नहीं मेरे पूरे परिवार का नाम प्रसिद्ध हो जाएगा।** इस उक्ति को उसने हमेशा अपने सामने रखा और इस क्षेत्र में बराबर प्रयत्न करता रहा, आज वह अमेरिका का सबसे धनी व्यक्ति है। एक वर्ष में उसने तीन-तीन बैंक स्थापित किए हैं, उसके खुद के दो हवाई जहाज हैं और समुद्र के अंदर एक सुंदर टापू उसने खरीद लिया है।

यह सब चमत्कार कैसे हो गया? उसने अपनी पुस्तक में स्वीकार किया है कि यह उन भारतीयों की देन है, जिनके साथ मुझे घूमने का अवसर मिला और जिनसे मैं इन क्रियाओं को सीख सका। आज मैं जो कुछ हूं, वह इस स्वर्ण तंत्र

की वजह से ही हूं।

और आपको आश्चर्य होगा कि एक वर्ष में इस पुस्तक की बारह लाख प्रतियां बिक चुकी हैं और अठारह विभिन्न भाषाओं में इस पुस्तक का अनुवाद हो चुका है। पुस्तक में लेखक ने योगियों से प्राप्त ज्यों के त्यों उदारहण, दोहे या वाक्य दिए हैं और उसका सामान्य अर्थ भी दिया है। उसने स्वयं इस बात को स्वीकार किया है कि इसे पढ़कर पहली बार में सफलता मिल जाए, यह जरूरी नहीं है, क्योंकि यह पूरा कार्य प्रैक्टिकल कार्य है। पुस्तक पढ़ कर कोई व्यक्ति तैरना सीख जाए, जरूरी नहीं होता, इसके लिए तो पानी में उतरना ही होता है, कई बार उसके नाक और मुंह में पानी भर सकता है, पर अंततोगत्वा वह तैरना सीख ही लेगा।

इस पुस्तक में कुछ महत्वपूर्ण योगियों के फोटो , उनका संक्षिप्त परिचय, निवास स्थान और उनसे प्राप्त कूटोक्तियों का विवरण दिया है और बताया है, कि इन कूट उक्तियों के अनुसार प्रयत्न करने पर धातु परिवर्तन सिद्धि प्राप्त हो सकती है। इस प्रक्रिया में न तो कोई मंत्र-तंत्र है, न कोई आसन प्राणायाम, न संध्या वन्दन आदि का झंझट है और न पद्मासन लगा कर माला फेरने का विधान है, इसमें तो शुद्ध भौतिक दृष्टि से रासायनिक क्रिया सम्पन्न करने का विधान है, और इस विधान से सफलता पाई जा सकती है।

तो फिर आपमें क्या कमी है

यदि अमेरिका का एक निर्धन असहाय, गुमनाम सा व्यक्ति अपने परिश्रम और प्रयत्न के बल पर इस विद्या को प्राप्त कर सफलता पा सकता है और एक ही छलांग में समृद्धि के अंतिम शिखर पर पहुंच सकता है, तो फिर आपमें क्या कमी है? जब एक बाहर का व्यक्ति भारतवर्ष में भटक कर ऐसी अद्‌भुत ज्ञान प्रक्रिया को सीख सकता है, तो फिर आप भी इसमें सफलता पा सकते हैं।

पर हम लोगों में एक ही बात की कमी है कि हम पूरी तरह से अविश्वासी व्यक्ति हैं, हमें तो अपने आप पर ही विश्वास नहीं है, आलोचना हमारा गुण धर्म बन गया है, हम **साधनों से सम्बन्धित लेखों की आलोचना कर बैठते हैं** आलोचना कर बैठते हैं, इसमें छपे हुए लेखों की भी आलोचना करने में आत्म सुख का अनुभव करते हैं और ऐसे भी व्यक्ति मिल जाएंगे, जो इस लेख को पढ़ कर अविश्वास से मुंह बिचका लेंगे और उनका फतवा यही होगा कि ऐसा थोड़े ही हो सकता है। इसकी अपेक्षा यदि

हम उस ज्ञान को प्राप्त कर उसके अनुसार परिश्रम करें और पूरे समर्पण भाव से कार्य करना प्रारम्भ करें तो निश्चित सफलता प्राप्त होती है। आवश्यकता रचनात्मक कार्य करने की है, सहज विश्वासी होने की है , पूरी तरह से परिश्रम करने की है और एक - दो साल या दो-चार महीने पूरी तरह समर्पित भाव से इस क्षेत्र में कार्य संपन्न करने की है। गीता के शब्दों में, यदि किसी वजह से इस कार्य में असफल हो गए तो मन में संतोष अवश्य रहेगा कि हमने सही दिशा में प्रयत्न किया है और यदि सफल हो गए तो जीवन में सब कुछ प्राप्त हो जाएगा और भारतवर्ष में ही नहीं पूरे विश्व में नाम छा जाएगा।

स्वर्ण रसायन से सम्बंधित महत्वपूर्ण ग्रंथ

1. ऋग्वेदोक्त श्री सूक्त, 2. लक्ष्मी तंत्र, 3. रुद्रयामल तंत्र, 4. काकचण्डीश्वरी कल्प तंत्र 5.रस हृदय तंत्र - (गोविंदपादाचार्यकृत) 6. गोरक्ष संहिता - (गोरक्षनाथ रचित) 7. रसाव्यय (कंकालयोगी कृत), 8. रस रत्नाकर रसायन खण्ड (नित्यनाथ सिद्ध), 9. रसरत्नाकर ऋषि खण्ड (नित्यनाथ सिद्ध), 10. रसार्णव (भैरवानंद योगी कृत), 11. आनंद कंद (मंथान - भैरव), 12. रस पद्धति - श्री बिंदुनाथ, 13. रसोपनिषद - राजा मदनरथ कृत, 14. रसेन्द्र चूड़ामणि - सोमदेव, 15. रस प्रकाश सुधाकर - यशोधर, 16. रस कौमुदी - ज्ञानचंद, 17. सिद्ध रसायन - व0 कृ0 मोरे, 18. पारद-संहिता - संकलित, 19, स्वर्ण तंत्रम् (**पूज्य गुरुदेव डॉ. नारायणदत्त श्रीमाली कृत**)।

इसके अलावा भी स्वर्ण तंत्र से सम्बंधित साहित्य प्रकाशित हैं और यदि व्यक्ति इस क्षेत्र में निश्चय ही कर ले तो वह प्रयत्न कर कुछ अन्य ग्रंथों का भी अध्ययन कर सकता है।

इसके अलावा कुछ उच्चकोटि के योगी भी ढूंढने पर मिल सकते हैं, जिन्हें इस विद्या का प्रामाणिक ज्ञान है और वे सिखाने में भी तत्पर हैं। आवश्यकता है ब्रूच जैसे समर्पित व्यक्तित्व की, जो पूरा परिश्रम कर अपनी धुन में बढ़ जाता है और अंत में सफलता प्राप्त कर ही लेता है।

धातु परिवर्तन - स्वर्ण क्रिया

ब्रूच ने अपने ग्रंथ में स्वर्ण बनाने से संबंधित कई प्रयोग दिए हैं, जो कि उसे विभिन्न योगियों से प्राप्त हुए हैं। ये प्रयोग सामान्य भाषा में और संस्कृत भाषा में हैं, जिसका उसने अंग्रेजी में सरल अर्थ प्रस्तुत किया है। नीचे मैं इससे संबंधित कुछ प्रयोग स्पष्ट कर

रहा हूं, जिसके माध्यम से पाठक इस क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर सकते हैं -

स्वर्ण प्राप्ति प्रयोग - 1

रक्तचित्रकमूलं तु कांजिकं शुद्धपारदम्
कंगुणी तेलसंयुक्त सर्वें कल्पं मलेपयेत्।
ताम्रपत्राणि तप्तानि तस्मिन् सिचेत्रिसप्तधा
एवं त्रिसप्तधा कुर्याद् दिव्यं भवति कांचनं।।

भावार्थ - लाल चित्रक की जड़ को लेकर नीले थोथे में उसको घोटें और इस प्रकार छः घण्टे घोटने के बाद उस रस को शुद्ध तांबे के टुकड़े पर लेप कर दें। इसके बाद नीला थोथा, सेन्धा नमक व कुंकुम बराबर मात्रा में लेकर इसे तांबे के टुकड़े पर डालकर कड़ाही में रख दें और इसे बीस किलो पानी में पकावें, जब एक किलो पानी रह जाए तो तांबे का टुकड़ा निश्चय ही स्वर्ण बन जाएगा।

स्वर्ण प्राप्ति प्रयोग - 2

क्षीरकंदभवं क्षीरे तप्तं ताम्रं निषेचयेत्।
शतवारं प्रयत्नेन तत्ताम्रं कांचनं भवेत्।।

भावार्थ - गंधक, रक्त चंदन, और रुद्रवन्ती बराबर मात्रा में लेकर उसमें तांबे को डाल दें और दस किलो पानी में पकावें जब पानी एक किलो रह जाए तो उस तांबे के टुकड़े को बाहर निकाल दें। इस प्रकार सात बार करें तो वह तांबे का टुकड़ा निश्चय ही सोने में बदल जाता है।

स्वर्ण प्राप्ति प्रयोग - 3

पारदं पलमेकं च हरिताल च तत्समं
गंधकं च तयोः तुल्यं मर्दनीयं विशेषतः
पूर्ववद् द्रवितं कृत्वा दिव्यं भवति कांचनं

भावार्थ - एक भाग पारा, एक भाग हरताल तथा दो भाग गंधक लेकर आक के दूध में दिन भर मर्दन करें, फिर इसे बीस किलो पानी में पकाएं, पकाने के बाद इसे बाहर निकाल दें और दो भाग तांबे को पानी की तरह पिघला कर इस पर डालें तो यह तांबा तुरंत स्वर्ण में बदल जाता है।

स्वर्ण प्राप्ति प्रयोग – 4

तापकस्य त्रयो भागा शिला भागा द्वयं तथा
म्लेच्छभागो भदेको पारदम्य तथा परः
कुमारी रसयोगेन भवयित्वा यथाविधि
दीपाग्नि तंत्र कर्त्तव्यो दिव्य रूपं हि कांचनं।

भावार्थ — तीन भाग हरताल, दो भाग मेनसिल तथा एक भाग हिंगुल को, एक भाग पारे में घोटें, फिर ग्वारपाठे के रस में मर्दन कर रात्रि को बीस किलो पानी में तांबे के साथ पकाएं तो वह तांबा निश्चय ही स्वर्ण में बदल जाता है।

इसके अलावा भी ब्रूच ने अपने ग्रंथ में और भी कई प्रयोग दिए हैं और उसने दावा किया है, कि इन प्रयोगों के माध्यम से ही उसने स्वर्ण प्राप्ति में सफलता पाई है। प्रामाणिक प्राचीन ग्रंथों के आधार पर भी यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि संस्कृत में दिए गए श्लोक प्रामाणिक हैं और यदि इनका सहारा लेकर कोई रसायन क्रिया में उतरे तो उसे अवश्य ही सफलता प्राप्त होगी, ऐसा मुझे विश्वास है। मेरी तो आकांक्षा ही यही है कि इस क्षेत्र में कुछ कर गुजरने को युवक सामने आएं और इस विज्ञान को केवल एक रूप में ही नहीं अनेक रूपों में प्रामाणिकता से सीखें। ऐसा करने से जहाँ उनका व्यक्तिगत हित साधित होगा वहीं इसका सामाजिक रूप से भी श्रेष्ठतम प्रभाव सामने आ सकेगा, भौतिक समृद्धि आ सकेगी और फिर इस देश को अपनी अर्थ व्यवस्था सुचारु रूप से चलाने के लिए पाश्चात्य देशों के मुख की ओर नहीं देखना पड़ेगा। मुख्य बात स्वर्ण निर्माण की नहीं है मुख्य बात तो उस प्रक्रिया को आत्मसात करने की है जो व्यक्ति किसी कुशल निर्देशक, किसी कुशल रसायनज्ञ के सम्पर्क में रहकर व्यवहारिक रूप से सीखता है। इस क्रिया में अनेक ऐसे आयाम आते हैं जिन्हें प्रत्यक्ष करके दिखाने पर ही आगे का मार्ग प्रशस्त हो सकता है। यदि कोई विदेशी व्यक्ति इसमें रुचि लेकर इसकी प्रामाणिकता को आत्मसात कर सकता है, तो इस देश का व्यक्ति क्यों नहीं ऐसा कर सकता ? मैं इन पंक्तियों के माध्यम से कोई दिवास्वप्न, कोई सब्ज बाग नहीं दिखाना चाहता, बस जो यथार्थ है उसे कहना चाहता हूँ और वस्तुत: किसी को किसी भी विषय की आलोचना करने का अधिकार भी तब प्राप्त होता है जब वह स्वयं किसी विषय में प्रविष्ट होकर उसमें कुछ पग चल चुका हो अन्यथा वह तो उसका पूर्वाग्रह मात्र ही कहा जा सकता है।